आयुष से सौतेलापन क्यों?

अशुतोष कुमार सिंह

दुनिया में भारत ही ऐसा देश है जहां पर चिकित्सा की विविध पद्धतियां विद्यमान हैं, और उनका लगातार विस्तार भी हो रहा है। चिकित्सा की दुनिया में भारतीय ज्ञान परंपरा का लोहा पूरी दुनिया मानती आई है।

कालांतर में भारत अपनी परंपरागत चिकित्सा पद्धतियों को भूलकर अंग्रेजी पैथी की ओर अग्रसर हो गया। अंग्रेजी पैथी का इतिहास महज 100-150 सालों का है। अपनी चीजों के प्रति भारतीयों की हीन भावना ने अंग्रेजी पैथी को सर्वश्रेष्ठ मान लिया और उनने अपने परंपरागत चिकित्सकीय ज्ञान को अवैज्ञानिक कह कर उससे किनारा कर लिया। इसका नुकसान यह हुआ कि अंग्रेजी चिकित्सा पद्धति का बाजार सुरसा के मुंह की तरह विकराल होता चला गया। भारतीयों को गरीब बनाए रखने का यह प्रमुख कारण बना।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों के अनुरूप आज भी हम अपनी स्वास्थ्य सेवा को नहीं ढाल पाए हैं। इसका एक कारण यह भी है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की परिभाषा में सिर्फ अंग्रेजी चिकित्सकों एवं सेवाओं को ही शामिल किया जाता है। आयुष के अंतर्गत आने वाले चिकित्सकों व सेवाओं को नहीं। ऐसे में वैंकि स्तर पर हमारे देश की स्थिति बीमारू देश की बनी हुई है। भारत में आयुष मंत्रालय का गठन 9 नवम्बर, 2014 को किया गया। इसके पूर्व भारतीय चिकित्सा एवं होम्योपैथी विभाग (आईएसएमएच) मार्च, 1995 में बनाया गया था और नवम्बर, 2003 में इसका नाम बदलकर आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होम्योपैथी विभाग यानी आयुष रखा गया था। देश में आयुष की शिक्षा बढ़ाने की जिम्मेदारी इसी मंत्रालय पर है। आंकड़ों के मुताबिक, देश में आयुव्रेद के 401 आयुर्वेद, सिद्ध के 11 और यूनानी के 53 कॉलेज 59 विश्वविद्यालयों से संबंद्ध हैं। इन कॉलेजों में से 140 आयुर्वेद कॉलेजों, 12 यूनानी कॉलेजों और 3 सिद्ध कॉलेजों में स्नातकोत्तर स्तर तक की शिक्षा प्रदान की जाती है।

होमियोपैथी शिक्षा के गुणवत्ता मानकों में सुधार के उद्देश्य से सरकार ने एक नया कानून होम्योपैथी केंद्रीय परिषद (संसोधन) अधिनियम, 2018 बनाया है, जिसे 13 अगस्त, 2018 को भारत के राजपत्र में 2018 का अधिनियम 23 के रूप में प्रकाशित किया गया है। नये विधायी ढांचे के अंतर्गत 176 कॉलेजों, जिनमें 13 नये होमियोपैथिक मेडिकल कॉलेज शामिल हैं, में बीएचएमएस पाठ्यक्रम आरंभ करने की अनुमति दी गई है। लेकिन एलोपैथी की पढाई करने वालों की संख्या के आगे ये आंकड़े ऊंट के मुंह में जीरा समान दिख रहे हैं। 31 दिसम्बर, 2018 के स्थिति के अनुसार राष्ट्रीय आयुष मिशन (एनएएम) अंतर्गत 27547 आयुष चिकित्सक (सह-स्थापित सुविधाओं के अंतर्गत 11883 आयुष चिकित्सक और आरबीएसके के अंतर्गत 15664 आयुष चिकित्सक) तैनात किए गए हैं। इन आंकड़ों को देखकर आप खुद तय कर सकते हैं कि आयुष चिकित्सकों को लेकर सरकार कितनी उदासीन है। आयुष के इस मद में बजट देने के नाम पर झुनझुना थमाती रही है। 2014 में जब मोदी सरकार का गठन हुआ तब भारतीय चिकित्सा पद्धति के चिकित्सकों में खुशी का माहौल था।

उन्हें लगा कि अब भारतीय चिकित्सा पद्धति के दिन लौट आएंगे। लेकिन सही अथरे में देखा जाए तो अभी भी भारतीय चिकित्सा पद्धति को उतना महत्त्व नहीं मिला है, जितना मिलना चाहिए था। एक ओर जहां अंग्रेजी चिकित्सा सेवाओं के नाम पर भारत का वार्षिक बजट 60 हजार करोड़ रुपये से ज्यादा का हो गया है, वहीं भारतीय चिकित्सा पद्धतियों को बढ़ावा देने के नाम पर 2 हजार करोड़ रुपये से भी कम बजट का आवंटन होता आया है। वर्ष 2018-19 मंत्रालय का कुल बजट अनुमान 1626.37 करोड़ रुपये था और संशोधित अनुमान 1692.77 करोड़ रुपये 31 मार्च, 2019 तक कुल खर्च 1606.96 करोड़ रुपये रहा। इस बजट में से 504.43 करोड़ रुपये (31 फीसद) केंद्र प्रायोजित परियोजना राष्ट्रीय आयुष मिशन के लिए था, लेकिन यह भी पूरी तरह खर्च नहीं हो पाया। इस पर 457.26 करोड़ रुपये ही खर्च हुए।

एक समय था जब हम अंग्रेजों के गुलाम थे और आज हम अंग्रेजी दवाइयों के गुलाम हैं। अंग्रेजी पैथी भी अंग्रजों की उपनिवेशी संस्कृति का ही एक हिस्सा है। इस बात को हमें समझने की जरूरत है। हमें अपनी चिकित्सा पद्धतियों को प्रमुखता देनी होगी। आयुष के बिना चिकित्सा-सेवा की परिकल्पना भारत के लिहाज से न्यायोचित नहीं की जा सकती। सरकार को आयुष चिकित्सा पद्धतियों को उन्नत करने की दिशा में सबसे पहले ध्यान देना चाहिए।

संपादकीय

विकास दर और इनकम बढ़ने का तिलिस्म

2020-21 का बजट आ लिया, बजट से पहले आर्थिक सर्वेक्षण आया। सरकार की उम्मीद है कि 2020-21 में अर्थव्यवस्था की विकास दर 6 से 6.5 प्रतिशत रहेगी। जो बंदे या बंदी चालू हैं, उनकी विकास दर इससे भी बहुत ज्यादा रहेगी।

इधर तरह-तरह की आर्थिक खबरें आती हैं, कई बार लगता है कि इनसे हमारा रिश्ता क्या है। फोर्ब्स की लिस्ट में इतने अरबपति भारत के। मतलब क्या इन खबरों से नान-अरबपतियों को प्रेरित होना चाहिए और लग जाना चाहिए अरबपति बनने। लखपति बनने की कोशिश भी कामयाब ना होने देते तमाम कंपनी वाले।

एक बार बीस हजार रुपये पड़े थे मेरे पास, इतने इश्तिहार आये कि बीस हजार देकर बाकी की नब्बे हजार की रकम ईएमआई में दे दो और वो वाला मोबाइल ले लो। घरवालों ने मार मचा दी कि ले लो वो वाला मोबाइल, बीस हजार मेरे निकल गये। उस उद्योगपति के पास पहुंच गये, जिसका नाम अरबपतियों की लिस्ट में था। अरबपति कोई कैसे बन जाता है, क्योंकि वह बीस हजार उसकी जेब से निकाल लेता है, जो खुद लखपति बनने की आकांक्षा पाले हुए था।

कोई अरबपति बने, इसके लिए जरूरी है कि किसी की जेब में बीस हजार न रहें।

मेरी न बढ़ी इनकम, 6.5 जीडीपी कैसे बढ़ जायेगी। क्या मैं देश में नहीं हूं। मैं समझाता हूं खुद को बेटे बढ़ोतरी वाला देश तेरा न है। बढ़ोतरी वाला देश कोई और है, कहीं और रहता है। ग्रेटर कैलाश में रहता है, नरीमन पाइंट में रहता है। मैं बढ़ोतरी तो दूर, पुरानी इनकम बनी रहे, इस पर ही परेशान रहता हूं। नत्थू पकौड़ी वाला इस परेशानी में न रहता, यद्यपि वह ग्रेटर कैलाश में भी नहीं रहता। उसने पकौड़ी के रेट दस प्रतिशत बढ़ा दिये। पब्लिक पकौड़ी के रेट बढ़ाकर दे दे देती है, लेखक किताबों के पांच परसेंट रेट बढ़ाकर मांग लें तो पाठक लेने से इनकार कर देता है। हिंदी के लेखक की जीडीपी उसकी शालों से नापी जाये तो हर साल करीब दस परसेंट बढ़ जाती है। बाकी दुनियाभर के पेशों की जीडीपी रकम की शक्ल में बढ़ती है, हिंदी के लेखक की जीडीपी शाल में बढ़ती है। किसी को कुछ रकम मिल जाये, तो वो उसे बाजारू घोषित कर देते हैं, जिन्हें अपनी किताब भी रकम देकर छपवानी पड़ती है। हिंदी का लेखक कुछ रकम भी इस तरह से अंदर करता है, मानो कहीं से जेबकटी कर ली हो।

हिंदी के लेखक की जीडीपी न बढ़ी, पकौड़ी वाले की बढ़ गयी, गोलगप्पे वाले की बढ़ गयी। तो क्या करें-पकौड़ी, गोलगप्पे बेचें। जी कई लेखक वैसे यही कर रहे हैं। एक बार छान लिये थे गोलगप्पे और पकौड़ी सत्तर के दशक में, वही अभी भी बेचे जा रहे हैं। ग्राहक लेने से इनकार करता है, तो उसे सुनना पड़ता है, इसे पकौड़ी की, असली पकौड़ी की समझ नहीं है। यह समझता नहीं है। खैर 6.5 प्रतिशत की रफ्तार से बढ़ जाये तो भी बुरा नहीं है, हिंदी के लेखक को कौन नीरव मोदी होना है, जो इनकम 878787389739073 प्रतिशत बढ़ने की उम्मीद करे।

सू- दोकू क्र.039

	7				1		3	
1		9				5		
			3				1	
		5						3
3					2		5	
				3				2
	4						7	
7		8		1		6		
	6		7		9			1

नियम

1. कुल 81 वर्ग है,जिसमें 9वर्गों का एक खंड बनता है।
2. हर खाली वर्ग में 1से 9 के बीच का कोई एक अंक र सकते है।
3. बाएं से दाएं और उपर से नीचे के प्रत्येक कालम,कतार और खंड में 1से9अंक में से किसी भी अंक का इस्तेमाल एक बार ही कर सकते है।

सू-दोकू क्र.38 का हल

5	2	4	9	6	7	8	1	3
3	6	7	4	1	8	2	9	5
8	1	9	3	2	5	4	6	7
6	3	5	1	9	4	7	2	8
7	9	8	5	3	2	6	4	1
2	4	1	7	8	6	5	3	9
4	5	3	6	7	9	1	8	2
9	8	6	2	5	1	3	7	4
1	7	2	8	4	3	9	5	6

बैंक कर्ज में कमी चिंताजनक

प्रभात पटनायक

नोटबंदी में 2016 के नवम्बर में जब 500 और 1000 रुपये के नोट बंद किए गए थे, उससे अचानक बड़ी भारी मात्रा में नकदी बैंकों की तिजोरियों में आ गई थी।

लेकिन जनता को मजबूरी में ही सही, जो यह नकदी जमा करानी पड़ी थी, उस पर बैंकों को तो ब्याज देना पड़ रहा था। स्वाभाविक रूप से वे इस नकदी का इस्तेमाल इस तरह से करने की कोशिश कर रहे थे कि इससे उनकी कुछ कमाई हो जाए वरना यह नकदी बैंकों की तिजोरियों में ही पड़ी रहती तो उससे तो बैंकों की लाभांकता में छेद ही हुआ होता। बहरहाल, यह बहुत ही ज्ञानवर्धक है कि बैंकों ने अचानक अपने हाथों में आ गई अतिरिक्त नकदी का इस्तेमाल किस तरह से किया।

भारत सरकार के पूर्व मुख्य आर्थिक सलाहकार अरविंद सुब्रमण्यम ने हाल में विचार पेश किया था कि बैंकों ने इस नकदी का इस्तेमाल, रीयल एस्टेट तथा अन्य क्षेत्रों को नॉन-बैंकिंग फाइनेंशियल कंपनियों के जरिए ऋण देने के लिए इस्तेमाल किया था। इससे हमारी अर्थव्यवस्था में उछाल आया था। अब जब यह उछाल बैठ गया है, इससे अर्थव्यवस्था में वह गिरावट तो आई ही है, जो हम सब देख रहे हैं लेकिन इसके साथ डुबाऊ ऋणों की गंभीर समस्या भी आई है, जिसके शकिंगे में आज बैंकिंग क्षेत्र खास तौर पर सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक हैं। बहरहाल, इस विचार की पुष्टि करने वाले शायद ही कोई साक्ष्य नजर आते हैं।

बैंकों में बड़े पैमाने पर जमा हुई नकदी का सहारा लेकर वाकई बैंकों द्वारा दिए गए ऋणों को बढ़ाया गया होता, भले ही ये ऋण नॉन बैंकिंग फाइनेंशियल कंपनियों के जरिए दिए गए होते तथा रीयल एस्टेट जैसे क्षेत्रों को ही दिए गए होते, तब भी अगर यह सब एक ठीकठाक लंबे अरसे में उल्लेखनीय परिघटना के रूप में हो रहा होता, उससे जनता के मुद्रा-जमा अनुपात में ऐसी गिरावट तो होती ही होती यह गिरावट भी झट से काफूर हो जाने वाली नहीं होती। इसलिए बंदीशुदा नोटों के बड़ी तादाद में जमा होने के चलते, अपने ऋण वितरण में बढ़ोतरी करने के जरिए आर्थिक उछाल लाने की स्थिति बैंक सिर्फ उसी सूरत में पैदा कर सकते थे, जब जनता बंद हुए नोटों को नये नोटों से बदलने के बजाए टिकाऊ आधार पर इस तरह जमा कराया अपना पैसा बैंकों में जमा रखती यानी मुद्रा के रूप में अपना धन रखने के बजाए उसे बैंक जमा-राशियों के रूप में रखने के लिए टिकाऊ तरीके से तैयार होते। दूसरे शब्दों में बैंकों के हाथों में ज्यादा नकदी आने से अर्थव्यवस्था में उछाल तो उसी सूरत में आ सकता था, जब जनता के मुद्रा-जमा अनुपात में टिकाऊ तौर पर बढ़ोतरी हुई होती। लेकिन ऐसी कोई टिकाऊ बढ़ोतरी तो हुई ही नहीं। लोगों ने बंद किए गए नोटों का 99 फीसद, बैंकों में जमा कराने के जरिए, सरकार की इस पूर्व-धारणा को तो पूरी तरह से झुठलाया ही कि नोटबंदी से 'काला धन' नष्ट हो जाएगा, इसके साथ ही उन्होंने अपना धन नये नोटों के रूप में रखना ही ज्यादा पसंद किया न कि बैंक जमाओं के रूप में। अर्थव्यवस्था का जैसे-जैसे पुनमरुद्राकरण हुआ, वैसे-वैसे लोगों के हाथों में मुद्रा बढ़ती गई। वास्तव में, नोटबंदी के एक साल के अंदर-अंदर जनता का मुद्रा-जमा अनुपात बढ़कर कमोबेश नोटबंदी से पहले की ऊंचाई तक पहुंच चुका था। इसलिए नोटबंदी के बाद के घटनाक्रम का उक्त आख्यान निराधार ही नजर आता है कि नोटबंदी के चलते, एनबीएफसी के जरिए ही सही, रीयल एस्टेट जैसे क्षेत्रों के लिए बैंक ऋणों का परिमाण बढ़ गया था और इसके चलते इन क्षेत्रों में उछाल आया था।

सचाई यह है कि उस दौर में, जब बैंकों के पास नकदी के पहाड़ लगे हुए थे, उन्होंने अपनी इस नकदी को या तो 'रिवर्स रेपो ऑपरेशन' के जरिए रिजर्व बैंक के पास जमा करा दिया था या फिर इसके लिए खास तौर पर गढ़े गए सरकारी बांडों को खरीदने में इस नकदी का निवेश किया था।